मैं हूं

मैं तुम्हारी
आँखों की
पलकों में हूं

मैं तुम्हारे
केशों की
सुगंध में हूं

मैं तुम्हारे
होंठों की
लालिमा में हूं

मैं तुम्हारी
मधुर मादक
मुस्कान में हूं

मैं तुम्हारी
दंतपक्ति की
तारिकाओं में हूं

मैं तुम्हारे
पग-पायल की
झंकार में हूं

मैं तुम्हारे
आलिंगन की
बांहों में हूं

दुर्गा प्रसाद झाला ,।

शायरी

वह तो नेक खातून है
पर्दा नशीं है
ना वह बे पर्दा है
वह तो परवरदिगार में
मशगूल है
वह तो सूरह अलट्ठ अहजाब
आयत से वाकिफ है
वह क्या जाने हुसन
इश्क की सौगात क्या है
इंसान ही शैतान है
जो पाक रूह को
खलल पैदा करता है

बहादुर अली इंदौर

ग़ज़ल

गलत को सही जो बताने लगे हैं।
वे छल छिद्र मन में छिपाने लगे हैं।

जिन्होंने रखी पाल कर के बुराई।
भला खुद को वे ही जताने लगे हैं।

दिया साथ जिनका मुसीबत में हमने।
वही लोग अहसाँ भुलाने लगे हैं।

जो दीपक जला कर के हमने रखे थे।
अंधेरा घना वो मिटाने लगे हैं।

जुदाई मिटा कर के हासिल हुए जो।
मिल के वही पल सुहाने लगे हैं।

दुखों से भरी ज़िंदगी जो गुजारें।
सुखों के वे सपने सजाने लगे हैं।

जो महफिल में कश्यप बहुत हँस रहे थे।
अकेले में आँसू बहाने लगे हैं।

प्रदीप कश्यप
भोपाल

जलती दुनिया की चीखों में,

कविता क्यों गूंगी बैठेगी ?
स्वारथ, समर्थ चुप बैठें जब,
कविता फिर क्यों ना बोलेगी?
इसने मारा तो सही किया,
वो मरा तो फिर कुछ बुरा लगा।
अपने अपनों के संग सभी,
कटने-मरने को राजी हैं।
दिन प्रतिदिन मरते मानुष पर,

कविता फिर क्यों ना बोलेगी ?
यह पशु तो मेरा पावन है,
वह पशु तो तेरा पावन है।
इन पशुओं की रक्षा करना,
सरकारी काम जरूरी है।

लाखों पशु पक्षी कटने पर,
कविता फिर क्यों ना बोलेगी?
जल, वायु सबको शुद्ध मिले,
भोजन में जहर तो कभी ना चले
जंगल जमीन की लूटों में,
जहरीली खेती पलती है।

अपनी धरती के जलने पर,
कविता फिर क्यों ना बोलेगी ?
जलती दुनिया की चीखों में,
कविता क्यों गूंगी बैठेगी ?
स्वारथ समर्थ चुप बैठें जब,
कविता फिर क्यों ना बोलेगी ?
अजित जैन जलज

न्यू सिविल लाइन,
शान्तिनगर, टीकमगढ़ (म.प्र.)

रिश्तों पर जब घात

कुर्सी हेतु वे करते, आपस में ये मेल
फिर सब मिलकर खेलते, सत्ता का ही खेल

आदमी ने बढ़ा लिये, इतने अब नाखून
जिसका बिगाड़ न सका, कोई भी कानून

झूठ बोलकर भी कहें, सच्चा है इंसान
इस जग से उसे मिलता, हरदम ही सम्मान

कुर्सी पाकर जो यहां, उड़ता है आकाश
खो देगा एक दिन सभी, अर्जित वो विश्वास

छोड़े ना दुख में कभी, जो मित्र तेरा साथ
पकड़ रखिये आप सदा, रमेश उसका हाथ

प्रेम-मोहब्बत की कहां, होती है अब बात
महंगाई ने कर दिया, रिश्तों पर जब घात

महंगाई से हो गया, हर गरीब बेहाल
खींचे है हर दौर में, नेता उसकी खाल

ग्रहणियां नाराज सभी, सुनकर आता ताव
महंगे हुए सामान के, कब उतरेंगे भाव

बदल गई है आज ये, सारी ही चौपाल
चल रहे है आज वहां, शकुनी वाली चाल

रमेश मनोहरा
शीतला माता गली
जावरा
मो. 9479662215

मानवता की लौ

सुनो ! तुम मत करो व्यर्थ में
इतनी चिंता अपने स्वभाव की
कोमलता के नष्ट होने की।
तुम सुहृदय थीं, हो और रहोगी,
बस कोशिश यही करना कि
अफ़वाहों की आँधियाँ
सफल न होने पाएँ
तुम्हारे इस सुंदर व प्रख्यात
व्यक्तित्व की लौ को बुझाने में,
जिसके प्रकाश में कितनी ही लाचार
आत्माओं को साहस और विवेक की
खुराक मिलती रही।

तुम हर संभव प्रयास करो
कि यह लौ अनवरत जलती रहे
और बनती रहे कारक
तुम्हारे आस-पास के लोगों में व्याप्त
अमानवीय तत्वों के अंधकार को
दूर करने का।

क्योंकि यह लौ केवल तुम्हारी नहीं,
उस मानवीयता की लौ है
जिसे बचाए रखना हम सबका धर्म है।
किसी के छल से इसे बुझने मत देना,
किसी की कटुता से इसे
मुरझाने मत देना,
किसी की अफ़वाह को इतना
अधिकार मत देना
कि वह इंसान को इंसान से दूर कर दे।

जहाँ किसी आँख में आँसू हों,
वहाँ संवेदना बनकर पहुँचना,
जहाँ कोई मन टूट रहा हो,
वहाँ विश्वास का दीप जलाना,
और जहाँ स्वार्थ का अंधकार हो,
वहाँ अपने हिस्से का उजाला बाँटना।

याद रखना–
मनुष्यता बड़ी-बड़ी बातों से नहीं,
छोटे-छोटे सद्भावों से जीवित रहती है;
और वह फलती फूलती व
निखरती रहती है किसी का
हाथ थाम लेने से,
किसी को समझ लेने से,
और बिना किसी प्रतिफल की अपेक्षा
के
किसी की मुश्किल घड़ी में
उसके लिए खड़े हो जाने से।

इसलिए अपनी कोमलता को
कमजोरी मत समझना,
इसे अपनी शक्ति बनाए रखना
क्योंकि जब तक किसी एक भी हृदय
में
दया, करुणा और विवेक जीवित है,
तब तक इस दुनिया में
मानवता की लौ बुझी
नहीं है।

बीना राय
गाजीपुर, उत्तर
प्रदेश

डॉ गोपाल आवटे: एक स्मृति

ऐसा क्यों होता है
मिलकर तुमसे
अनायास पा लेता हूँ
आनंद ही आनंद
काश
हो जाता इतना सहज
बच्चों जैसा
जो नि :संकोच
जाते हैं लिपट
अपनों से...
पूर्व सा ही
तुम्हारा मैं !!(1995)

डा. सारिका मुकेश(तमिलनाडु)

गद्दर होना चाहिए

अगर-मगर छोड़ सबर होना चाहिए,
खुद में घर नहीं नगर होना चाहिए

घूम-फिर के जो समझ दुनिया नें दी,
लगाने को दिल लचर होना चाहिए

कर ही लीं जब बातें इधर-उधर की,
यारी में एक सा बज़र होना चाहिए

खुद लिए हैं बहुत यहां खुदा के लिए,
बंदों के दखल में ज़र होना चाहिए

सोच अपनी जगह समझ अपनी जगह,
अंतर दोनों में ज़बर होना चाहिए

फैकते हैं स्याही अपने ही लोग,
लपे-बाजों में ग़दर होना चाहिए

चाहतों में गैरत लाना ना कभी,
अपनों को पा के तर होना चाहिए

विप्रम स्वतंत्र लेखक, दिल्ली
गाजियाबाद

खुश्बू भरा वो झोंका जो फर-फर निकल गया
जैसे सुकूँ बिना रुके अक्सर निकल गया।

आँखों से उसकी अश्क मेरा गर निकल गया
यानी, वो मिला उससे भी बढ़ कर निकल गया।

रोती रही मैं पर वो पसीजा नहीं कभी
हमने जिसे खुदा कहा,पत्थर निकल गया।

तूने तो तोड़ के मेरा दिल चूर कर दिया
अब और टूट जाने का भी डर निकल गया।

डी. पी. से तो लगा वो मुझे, है जवाँ अभी
मिलने पे हाय! उम्र का सत्तर निकल गया।

कोशिश डुबोने की तो उमाने ने की बहुत
मै हौसले की नाव से बाहर निकल गया।

चाहा था जाए मुझपे ही लखूते-जिगर मेरा
किरदार उसका मुझसे भी बेहतर निकल गया।

'सुविधा' ने चाहा जिसको भी, हर वक़्त साथ हो
बदक़िस्मती, वो जीस्त से अक्सर निकल गया।

सुविधा पंडित नारायण सा शाला

सुलगने लग गए जज्बात भी

(प्रणय प्रभात)
- गुजरती जा रही है रात भी, आहिस्ता आहिस्ता।
सुलगने लग गए जज्बात भी, आहिस्ता आहिस्ता।।

- उमड़ आए हैं बादल आँसुओं के, तो बरसने दो।
कभी थम जाएगी बरसात भी, आहिस्ता आहिस्ता।।

- अभी तो गूँज है बेशक, ज़मीं से आसमानों तक।
भुला दी जाएगी ये बात भी, आहिस्ता आहिस्ता।।

- अभी बस आस्तीनों तक पहुंच कर, रेंगते हैं वो।
पता चल जाएगी औक़ात भी, आहिस्ता आहिस्ता।।

- अदा मानो, नज़ाकत या फ़क़त तौहीन की आदत।
निकाली जेब से खैरात भी, आहिस्ता आहिस्ता।।

- जो पहले थे नहीं है अब, जो अब हैं कल नहीं होंगे।
बदल जाएंगे ये हालात भी, आहिस्ता आहिस्ता।।

- न अंदाज़ा हुआ हमको, न होने ही दिया उसने।
वफ़ा की शक्ल में की घात भी, आहिस्ता आहिस्ता।।

प्रभात प्रणय श्योपुर (मप्र)

पर्दा

पसीना रुख पे वो छलकाने लगा है,
बुखार-ए-इश्क अब रंग लाने लगा है।

अजब रंग तेरे रुख-ए-ताब में है,
ये मौसम तिरे रंग चुराने लगा है।

रवायत तोड़ दी सूरजमुखी ने,
तुझे ही देख कर मुस्काने लगा है।

तिरी पीतल की बाली देख कर वो,
सर-ए-बाज़ार अब भाव गिराने लगा है।

न रूठ इस तरह से तू ऐ ज़ालिम,
मह-ओ-खुर्शीद तुझको मनाने लगा है।

जवानी चाहती थी कर गुज़रना कुछ,
तिरी खिड़की का पर्दा बुलाने लगा है।

न हो मग़रूर यूँ ताब-ए-जुनूँ पर,
तिरा आईना भी 'अक्स' इतराने लगा है।

नितिन पुरोहित अक्स उज्जैन

कभी खुशी तो कभी उदासी

कभी खुशी तो कभी उदासी
सत्य यही ईश वरदान।
मानव जीवन
प्रभु देते हैं,
रखिए यह हृदय में भान।।
फिर कहीं लगेगी
फाँ?सी।।
कभी खुशी---

खुशी मिलें तो नाचें कूदें,
सबका हम करें सम्मान।
नहीं उदासी मन में आए,
नित्य करें इष्ट का ध्यान।।
यही लिखकर गये ज्यासी।।
कभी खुशी---

उठती उमंग मनमंदिर में,
सच्चाई इसकी जानें।
जब-तब हम उदास हो जाते,
पास कौन
सच पहचानें।।
मत कहिए भूल जरा सी।।
कभी खुशी---

इधर खुशी तो उधर उदासी,
समझें कैसे जीना है।
मिले स्वादिष्ट भोजन मीठा,
बिष भी जब
तब पीना है।।
फिर खाना रोटी वासी।।
कभी खुशी---

शंभूसिंह रघुवंशी 'अजेय',
गुना,म.प्र.

ग़ज़ल

वो कदरदान दोस्ती के हैं।
जो मददगार हर किसी के हैं।

वो हमेशा मिलेंगे मुस्काते,
जो तलबगार हर खुशी के हैं।

टिमटिमाते रहेंगे वो हरदम,
राहबर जो यहाँ सभी के हैं।

आँख से वास्ते निभाते हैं,
अक्स जो दूर रोशनी के हैं।

है सभी के लिए दुआ उनकी,
जो निगहबान ज़िंदगी के हैं।

नाज़ रखते हैं सोचपर अपनी,
वो जिन्हें बात के सलीके हैं।

नवीन माथुर पंचोली
अमझेरा धार मप्र 454441

छोटा हूँ तो क्या हुआ

छोटा हूँ तो क्या हुआ, मन में बड़ा विचार।
बूँद-बूँद से भर रहा, सागर का भंडार।।

नन्हा दीपक क्या करे, पूछे जग संसार।
अँधियारा छँटता वही, जब जले एक बार।।

कद छोटा हो तो रहे, हौसला आसमान।
पर्वत भी झुकता कभी, देखे दृढ़ इंसान।।

कण-कण मिलकर बन गया, धरती का आकार।
छोटा कोई भी नहीं, यदि भीतर है सार।।

बूँद अकेली क्या करे, हँसे अगर संसार।
बूँद-बूँद मिलकर बने, सागर देख अपार।।

चींटी छोटी है मगर, चढ़ती ऊँचा शैल।
मेहनत जिसके साथ हो, जीत उसी का खेल।।

नन्हा बीज दिखे मगर, भीतर वन का राज।
समय मिले तो दे सके, धरती को नव साज।।

छोटी सी मुस्कान में, छिपा बड़ा संसार।
जिसने दिल से दे दिया, उसका ऊँचा प्यार।।

शब्द भले हों चार ही, रखते गहरा मोल।
सच्चे मन से निकलकर, खोलें मन के बोल।।

छोटी सी कोशिश करे, बदल सके हालात।
एक कदम ही खोलता, मंजिल तक की बात।।
नन्ही किरणें भोर की, हरती तम हर बार।

छोटा होकर भी बने, सूरज का आधार।।
माटी का कण क्या करे, सोच रहा हर हाल।
मिलकर वही बना सके, सुंदर भवन विशाल।।

छोटी नाव भँवर फँसी, रखती अपना मान।
जिसके भीतर साहस हो, पार करे तूफ़ान।।

छोटी गलती मानकर, बड़ा बने इंसान।
झुकने वाला ही सदा, पाता सच्चा मान।।

कम साधन से भी रचे, सपनों का संसार।
हिम्मत जिसके पास हो, उसको क्या दरकार।।
नन्हे पंखों से उड़ें, सपने लेकर साथ।
आकाशों की दूरियाँ, बन जाती दो हाथ।।

छोटा हूँ तो क्या हुआ, भीतर मेरा मान।
कर्मों से पहचान हो, यही बड़ी पहचान।।

-डॉ. प्रियंका सौरभ

जिधर देखिए ताड़ खड़े हैं

- बड़े अनंत, असीम हो गए।
दुनिया को तस्लीम हो गए।।

- करतूतें इन्सां ने की थीं।
लज्जित राम-रहीम हो गए।।

- पढ़े-लिखे रोगी बन बैठे।
अनपढ़ नीम-हक़ीम हो गए।।

- एक दुपट्टा डाल गले में।
सारे मरियल भीम हो गए।।

- जोधा आपा हैं चक्कर में।
अकबर चचा सलीम हो गए।।

- खद्दरधारी सांड बन चुके।
मतदाता बरसीम हो गए।।

- जिधर देखिए ताड़ खड़े हैं।
गायब पीपल नीम हो गए।।

(प्रणय प्रभात)

मौसम का बदलता स्वरूप

कहीं अतिवृष्ट कहीं सूखा
मौसम की अस्थिरता
रौद्र रूप दिखता। असंतुलित
पर्यावरण
चिंतित करता बारिश में बारिश
नहीं
हो गई पानी की कमी
भूमि में नहीं नमी
खाद्यान्नों की उपज में कमी
महंगाई की मार हुई असहनीय।
तापमान उच्च स्तर पर
जल हुआ निम्न स्तर
दोहरी बारिश की मार
कहीं सूखा तो कहीं बाढ़ से
नुकसान
क्या कभी किया विचार
क्या है इसका उपचार
नहीं है गलतियों का भान।
उजड़े वन और वृक्षों की कटाई
भरमार
छांव नहीं, हरियाली नहीं
फलों का उत्पादन नहीं
लहलहाते खेत नहीं।
किसानों के चेहरे उदास
व्यापार नहीं, नौकरी नहीं
युवा बेरोजगार
ऊपर से युद्ध की मार
सारा विश्व परेशान,बेजार
कारण, बदले मौसम का व्यवहार

हंसा मेहता
इंदौर
9827730677

नहीं है

ये दुनिया व्यापार नहीं है ,
खुशियों का त्यौहार नहीं है।

मौत यहाँ पर आती जाती ,
जीवन का मुनाफ़ार नहीं है।

यहाँ मिलन के गीत गूंजते ,
केवल हाहाकार नहीं है।

त्योहारों पर मौज मनाते ,
मन का सूना द्वार नहीं है।

सागर संग तुमकती लहरें ,
केवल दुख उपहार नहीं है।

महेंद्र कुमार वर्मा भोपाल
मो 9893836328

गीतिका

भ्रष्टाचार जड़ से मिटाने चले हैं
हथेली पर सरसों उगाने चले हैं

आँखें खुली हैं मगर सो रहे हैं
ऐसे कायरों को जगाने चले हैं

परख चुकें जब सारा जमाना
खुद को खुद से मिलाने चले हैं

कूएं के बाहर भी है एक दुनिया
कूपमण्डूकों को बताने चले हैं

दिल जिनके हो चुके हैं पत्थर
दुख दर्द उनको सुनाने चले हैं

भूख से जो लड़ रहे हैं उनको
ख्वाब महल के दिखाने चले हैं

पुनीत वक्त के जो मारे हुए हैं
नसीब हमारा चमकाने चले हैं

डॉ पुनीत कुमारमुरादाबाद
244001

नज़ाकत से हमारे दिल पे बिजली क्यूँ गिराती हो,
दग़ा देकर वफ़ा अपनी हमें क्यूंकर दिखाती हो।

सभी को जाम देती हो, मुझे ही टाल जाती हो,
रक़ीबों से जरा मिलकर, मुझी को क्यूँ सताती हो।

क़सम देकर जमाने की, मुझे क्यूँ भूल जाती हो,
जला कर मेरे ख़त उनको, हवा में क्यूँ उड़ाती हो।

जगाती चाह अनबूझी, नयन से क्या इशारा है,
दबाकर होंठ दाँतों से, जिया को क्यूँ जलाती हो।

झुकी नज़रें, लपेटा उंगलियों में अपना ही दामन,
गजब शोखी है चेहरे पे , जहाँ से क्यूँ छिपाती हो।

लबों पर हैं तबस्सुम पर, निगाहें में शरारत है,
छुपा कर जुल्फ में क़ातिल, घटा घनघोर लाती हो।

जमाने भर से लड़ता हूँ, तुम्हारे इक इशारे पर,
हमेशा तुम मुझे हंस कर,मगर क्यूँ आजमाती हो।

चरागों से नहीं 'दुष्यंत' ये दिल जलने वाला है,
बुझा कर मेरी उम्मीदें, अँधेरा क्यूँ बढ़ाती हो।

दुष्यंत कुमार व्यास रतलाम

दीये का तेल

शहर में कल रात उजाला था,
हर हाथ में जैसे निवाला था,
जन्मदिन का जश्न निराला था,
हर ओर रोशनी का उजाला था।

गली-गली में दीप जले थे,
नारे थे, उत्सव के मेले थे,
कैमरों में दृश्य सजे थे,
चेहरों पर मुस्कान खिले थे।

मगर उसी रोशन राह के नीचे,
कुछ बच्चे थे चुपचाप खड़े,
बुझे हुए दियों को टटोल रहे थे,
तेल की बूँद ढूँढ रहे थे।

न उनको उत्सव से मतलब था,
न उनको जयकारे से वास्ता था,
न दीपों की कतार सुहानी थी,
बस घर की भूख पुरानी थी।

एक बच्चा बोला—
'इसे सँभालकर रखना,
कल माँ सब्जी बनाएगी,
चूल्हे में आग लगाएगी,
थोड़ा तेल बचा लाएँगे,
तो शायद रोटी खा
पाएँगे।'

सुनकर मन भीग गया,
उत्सव जैसे फीका पड़ गया,
जिस तेल ने रात सजाई थी,
वही तेल सुबह रसोई में आई थी।

किसी के लिए दीपक था,
किसी के लिए जीवन था,
किसी के लिए उत्सव था,
किसी के लिए भोजन था।

किसी ने तेल से दीप जलाया,
किसी ने छोटों में बेहरा सजाया,
किसी ने जय-जयकार लगाई,
किसी ने बोतल में बूँद बचाई।

यह कैसी रोशनी का मेला है,
जहाँ पेट अभी भी अकेला है,
जहाँ दीपों की कतार खड़ी है,
पर रसोई अब भी खाली पड़ी है।

जिस घर में चूल्हा ठंडा है,
वहाँ दीपक भी क्या सुनहरा है?
जिस घर में अन्न नहीं आता,
वहाँ उत्सव किस काम आता?

दीया जलाना अपराध नहीं है,
उत्सव मनाना भी पाप नहीं है,
पर यदि दीप जले और पेट रहे
खाली,
तो कैसी रोशनी, कैसी खुशहाली?

रोशनी तब सत्य में रोशनी होगी,
जब हर थाली में रोटी होगी,
जब हर बच्चे की आँख में सपना
होगा,
जब हर घर का चूल्हा अपना होगा।

तस्वीरों से देश नहीं सँवरता,
नारों से पेट नहीं भरता,
मंचों से भूख नहीं जाती,
सिर्फ रोशनी से रात नहीं जाती।

जिस देश में बच्चे तेल बटोरें,
और बड़े दीपों के मेले निहारें,
वहाँ सवाल दीप से बड़ा होगा,
वहाँ अँधेरा भीतर खड़ा होगा।

कल रात बहुत दिये जलाए,
आज वही बच्चे तेल बचाए,
तुमने उत्सव खूब मनाया,
उन्होंने उससे भोजन पाया।

तुम्हारे लिए लौ थी प्यारी,
उनके लिए बूँद थी भारी,
तुम्हारे लिए जश्न की रात,
उनके लिए अगले दिन की बात।

तुमने दीपों से रात सजाई,
उन्होंने उनसे रोटी बचाई,
तुमने रोशनी की तस्वीर बनाई,
उन्होंने भूख की तस्वीर छिपाई।

इतिहास अगर कभी पूछेगा—
उस रात कितना प्रकाश हुआ था?
तो उत्तर केवल इतना मत देना
कि शहर पूरा उजास हुआ था।

यह भी कहना—
उसी उजास के नीचे
एक बच्चा तेल बटोर रहा था,
अपने घर की भूख से
हर बूँद को जोड़ रहा था।

यह भी कहना—
दीये हजारों जलाए गए थे,
पर कितने चूल्हे जलाए गए थे?

यह भी कहना—
जन्मदिन खूब मनाया गया था,
पर कितने बच्चों को खिलाया गया
था?

क्योंकि रोशनी की असली पहचान
दीवारों पर चमकती लौ नहीं,
भूखे बच्चे के चेहरे पर
लौटती मुस्कान होनी चाहिए सही।

दीप वही जो अँधेरा हर ले,
दीप वही जो भूख भी हर ले,
दीप वही जो जीवन सँवारे,
दीप वही जो आँसू उतारे।

वरना तेल जलता रहेगा,
अँधेरा पलता रहेगा,
दीपक चमकता रहेगा,
गरीब का चूल्हा जलने को तरसता
रहेगा।

और जब अगली बार
तुम दीप जलाने जाओगे,
एक पल उस बच्चे को याद कर
पाओगे?
जो बुझी बाती से तेल निकालकर
घर की कड़ाही तक ले जाएगा,
और उसी बची हुई बूँद से
अपनी भूख का दीप जलाएगा।

तब शायद समझ में आएगा—
उजाला दीपों की संख्या से नहीं,
भूखे घर की हँसी से होता है;
देश तभी सचमुच रोशन होता है,
जब किसी बच्चे को
रोटी के लिए
बुझा हुआ दीया नहीं ढूँढना पड़ता
है।
जिस रात हजारों दीप जलें
और कोई बच्चा तेल बटोरे,
वह रात उजली कैसे कह दें—
जब भूख अँधेरे में मुँह खोले?

दीप जले तो बात बने,
चूल्हा जले तो रात बने,
थाली में जब रोटी आए,
तभी देश में प्रभात बने।

वरना मेरी आँखों में
वह रोशनी व्यर्थ रहेगी—
जहाँ दीपों की लौ चमकेगी,
पर बच्चे की भूख
अँधेरे में ही रहेगी।

कुमार धनंजय सुमन
सोनवर्षा ,थाना-
बिहपुर,भागलपुर,बिहार
853201

गंगा सी निर्मल पावन पवित्र भाषा
हमारी हिन्दी है।

रस छंद अलंकार से सुसज्जित भाषा
हमारी हिन्दी है।

वेद पुराण उपनिषद ग्रन्थ लिखे गए
भाषा हिन्दी में,
तुलसी,कबीर,रसखान,बच्चन की
भाषा भी हिन्दी है।

प्रभात गौर - नेवादा जंघई प्रयागराज